



योग के उद्गम : एक वैदिक मीमांसा

डॉ. नवीन चन्द,
 सहायकाचार्य, संस्कृत-विभाग,
 एस.एल. बावा डी.ए.वी. महाविद्यालय, बटाला,
 सम्बद्धता— गुरु नानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर।

सारांश (Abstract)

प्रस्तुत शोध-पत्र में भारतीय दर्शन एवं साधना पद्धति की अमूल्य निधि 'योगविद्या' के दार्शनिक बीजों और मूल आधारों का चारों वेदों के आलोक में गंभीर एवं प्रामाणिक अनुशीलन किया गया है। यद्यपि वैदिक संहिताओं में योगविद्या किसी एक प्रकरण में क्रमबद्ध रूप से निबद्ध नहीं है, तथापि समग्र वैदिक वाङ्मय में इसके दार्शनिक सूत्र, आध्यात्मिक संकेत और व्यावहारिक प्रणालियाँ यत्र-तत्र बीज रूप में संव्याप्त हैं।

शोध-पत्र में सर्वप्रथम 'युज्' धातु की त्रिविध व्याकरणिक निष्पत्ति (समाधि, संयमन और योग) को स्पष्ट करते हुए प्रमुख योग-पद्धतियों के वैदिक स्रोतों का विश्लेषण किया गया है:

1. **अष्टाङ्ग योग:** यम (अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह), नियम (शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वरप्रणिधान), आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान एवं समाधि—इन सभी आठों अंगों के दार्शनिक एवं व्यावहारिक बीज ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा अथर्ववेद की ऋचाओं में सप्रमाण प्रमाणित किए गए हैं।
2. **क्रियायोग एवं षडङ्ग योग:** तप, स्वाध्याय एवं ईश्वरप्रणिधान रूप क्रियायोग के साथ-साथ हठयोग के आधारभूत 'षडङ्ग योग' का कृष्ण यजुर्वेदीय उपनिषदों (मैत्रायणी, अमृतनाद एवं ध्यानबिन्दु) से ऐतिहासिक एवं शास्त्रीय संबंध उद्घाटित किया गया है।
3. **भगवद्गीता के त्रिविध योग:** ज्ञानयोग (ऋग्वेद का 'द्वा सुपर्णा...' रूपी साक्षी भाव), कर्मयोग (यजुर्वेद के 'कुर्वन्निवेह कर्माणि...' एवं निष्काम यज्ञ-दृष्टि) तथा भक्तियोग (वैदिक उपासना व आत्मसमर्पण) के मूल स्रोत वेदों में ही प्रतिष्ठापित हैं।

निष्कर्षतः, यह शोध इस तथ्य को अकाट्य रूप से पुष्ट करता है कि योगविद्या कोई परवर्ती अथवा विलग वैचारिक संरचना नहीं, अपितु वैदिक ज्ञान-परंपरा की ही निरंतरता है। यह अध्ययन प्राचीन वैदिक प्रज्ञा और आधुनिक अनुसंधानों के मध्य सुदृढ़ सेतु निर्माण की दिशा में एक मार्गदर्शक दृष्टि प्रदान करता है।

प्रमुख कुंजीपद (Keywords): योगविद्या, वैदिक आधार, अष्टाङ्ग योग, षडङ्ग योग एवं गीता के त्रिविध योग।

योग एक महत्त्वपूर्ण भारतीय विद्या है। अन्य विद्याओं की भांति इस विद्या का मूल स्रोत भी वेदों में दृष्टिगोचर होता है। किन्तु वेदों में योगविद्या से सम्बन्धित प्रमुख विचार-सूत्र किसी एक स्थान पर नहीं मिलते अपितु चारों वेदों में ही यत्र-तत्र योग मूलक विचार मन्त्र रूप में दृष्टिगोचर होते हैं। योगः, योगम्, योगे, योगैः आदि अनेक रूपों में चारों वेदों में यह शब्द आया है।

योग शब्द का शाब्दिक अर्थ इस प्रकार से किया गया है- योग शब्द 'युज्' धातु में 'घञ्' प्रत्यय लगाने से निष्पन्न होता है। पाणिनीय व्याकरण के अनुसार 'युज्' धातु तीन गणों में पाई जाती है, यथा-

1. युज् समाधौ, समाधि अर्थ में, दिवादिगणीय (आत्मनेपदी)
2. युज् संयमने, संयमन अर्थ में, चुरादिगणीय (परस्मैपदी)
3. युजिर् योगे, जोड़ने अर्थ में, रुधादिगणीय (उभयपदी)

योगविद्या की अत्यन्त समृद्ध तथा बहु आयामी परम्परा रही है। इस परम्परा के अलग-अलग आयाम, अलग-अलग साधना पद्धतियों पर आधारित है। जैसे अष्टाङ्ग योग, क्रियायोग, षडङ्ग योग, उपासना योग, ज्ञानयोग, कर्मयोग, भक्तियोग आदि। इनमें अन्तिम तीन योग श्रीमद्भगवद्गीता में विशेष रूप से चर्चित हैं। क्या इन सबके मूल स्रोत या आधारों को वेदों में खोजा जा सकता है? यह एक प्रासंगिक प्रश्न है। जिसके लिए वेदों में योगविद्या के यौगिक आधार का गहराई से अध्ययन आवश्यक प्रतीत होता है।



प्रमुख योग-साधना-पद्धति और उनके वैदिक सन्दर्भ

इस महत्त्वपूर्ण विषय पर विचार करते समय अष्टाङ्गयोग, क्रियायोग, ज्ञानयोग, कर्मयोग और भक्तियोग पर यहाँ क्रमशः वैदिक सन्दर्भ के साथ प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा रहा है।

1. अष्टाङ्गयोग

अथर्ववेद का एक महत्त्वपूर्ण मन्त्र है जिसके अन्तर्गत 'इमं यवमष्टा योगैः' इस मन्त्र में अष्ट साधनाओं या अष्टयोग का उल्लेख मिलता है। यदि पातंजल योग प्रणीत अष्टाङ्ग योग के सन्दर्भ में इसका अर्थ ग्रहण करें तो इससे यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि वाला योग चिन्तनीय हो जाता हैⁱⁱⁱ। यहाँ संक्षेप में इन योगाङ्गों पर क्रमशः इस प्रकार विचार किया जा सकता है।

1. यम

महर्षि पातंजलि प्रणीत अष्टाङ्ग योग में पाँच यम माने गये हैं— अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह^{iv}। ये महाव्रत हैं और योगाभ्यासी को शासित करने वाले हैं^v। वेदों में इनके सन्दर्भ में निम्नलिखित मन्त्र मिलते हैं—

(अ) अहिंसा :- 'मा मा हिंसी'^{vi} अर्थात् हे रुद्र ! मेरी हिंसा मत करो। 'अग्रे मा हिंसी'^{vii} अर्थात् हे अग्नि ! परम प्रकाश ! हमें हानि न पहुँचाओ।

(ब) सत्य :- सत्येन सत्यं यज्ञेन यज्ञः^{viii} अर्थात् सत्य से सत्य मिलता है और यज्ञ से यज्ञ। सत्येनोत्तमिता भूमिः^{ix} अर्थात् सत्य से भूमि का आधार दृढ़ होता है। ऋतं सत्यम्, ऋतं सत्यम्^x अर्थात् ऋतु सत्य है सत्य ऋतु है।

(स) अस्तेय :- अस्तेय का अर्थ है चोरी न करना^{xi}। चोरी एक प्रमुख दुष्कर्म है। वेदों में दुष्कर्मों से बचने की प्रार्थना की गई है। 'वि मा पाप्मना पृङ्क्तम्'^{xii} अर्थात् मुझे पाप से हटाओ। 'परिमाऽग्रे दुश्चरितम् बाधस्व'^{xiii} अर्थात् हे ईश्वर ! मुझे दुष्कर्म से बचाओ।

(द) ब्रह्मचर्य :- अथर्ववेद में ब्रह्मचर्य और तप का प्रतिपादन किया गया है। यथा— 'ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाप्नोत'^{xiv}।

(ध) अपरिग्रह :- 'मा गृधः कस्य स्विद्धनम्'^{xv} अर्थात् किसी के धन का लालच मत करो।

2. नियम

योगसूत्रकार के अनुसार नियमों की संख्या भी पाँच हैं— शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वरप्रणिधान^{xvi}। इनमें से तप का उल्लेख ऊपर ब्रह्मचर्य के प्रसंग में किया जा चुका है। अन्य के सन्दर्भ इस प्रकार से हैं—

(अ) शौच^{xvii} :- शौच का अर्थ है पवित्रता या शुद्धि। यजुर्वेद में द्रष्टव्य है— 'पुनन्तु मा देव जनाः'^{xviii} अर्थात् देव गण मुझे पवित्र करें। 'पुनन्तु विश्व भूतानि'^{xix} अर्थात् सभी प्राणी मुझे पवित्र करें।

(ब) सन्तोष^{xx} :- यजुर्वेद में 'तोशमाना'^{xxi} इस शब्द का अर्थ महर्षि दयानन्द ने सन्तोष कारक किया है। इसके अतिरिक्त सन्तोष के समर्थन में डॉ. कंवल किशोर ने ऋग्वेद 10.13.34 का भी उल्लेख किया है^{xxii}।

(स) तप :- जीवन के द्वन्द्वों (जैसे- सुख-दुःख, सर्दी-गर्मी, भूख-प्यास) को समभाव से सहन करते हुए अपने लक्ष्य या साधना के प्रति दृढ़ रहना तप या तपस्या है।

(द) स्वाध्याय :- स्वाध्याय के दो अर्थ हैं (1) 'स्व' अर्थात् आत्मा (2) 'स्व' अर्थात् कल्याणकारक विषयों का अध्ययन। दोनों ही अर्थों में अनेक वैदिक सन्दर्भ स्वाध्याय के प्रसंग में प्रस्तुत किये जा सकते हैं। यथा— 'ओम् क्रतो स्मर। क्लिबे स्मर। कृतं स्मर।'^{xxiii}, 'विद्ययाऽमृतमश्नुते'^{xxiv}।

(ध) ईश्वरप्रणिधान^{xxv} :- ऋग्वेद की निम्न ऋचायें ईश्वरप्रणिधान के सन्दर्भ में प्रस्तुत की जा सकती हैं— ऋग्वेद 1.2.1, 1.18.7, 1.62.11, 1.65.1 आदि। यजुर्वेद के अनुसार— ऋक्, साम और यजुर्वेद द्वारा पार हो जाओ^{xxvi}।

3. आसन

आसन शारीरिक स्थिति की स्थिरता के परिचायक है^{xxvii}। आसन की सिद्धि का फल है गर्मी-सर्दी, सुख-दुःख आदि द्वन्द्वों से कोई चोट न पहुँचे^{xxviii}। वेदों में चरित्र की दृढ़ता और द्वन्द्वजय की अनेक प्रेरक ऋचायें भी खोजी जा सकती हैं।

4. प्राणायाम^{xxix}

प्राण और अपान आदि पाँचों प्राणों का नियमन प्राणायाम के माध्यम से किया जाता है। वेदों में— 'प्राणाय स्वाहा', 'वायवे स्वाहा'^{xxx}, 'साम प्राणं प्रपद्ये'^{xxxi} अर्थात् प्राण की रक्षा से सामवेद को प्राप्त हो।

5. प्रत्याहार^{xxxii}

प्रत्याहार धारणा का सहायक योगाङ्ग है और धारणा की तैयारी के लिए इसकी महत्ता सर्वविदित है। वास्तव में यह सांसारिक भोगों के प्रति विरक्ति की तैयारी है और यदि गहराई से देखा जाये तो धारणा और ध्यान मानो एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। प्रत्याहार का अर्थ इन्द्रियों को भोगों तथा दोषों



से हटाना है, जिसकी वे अभ्यस्त हो चुकी हैं। योगसूत्रकार ने प्रत्याहार की सिद्धि का फल 'इन्द्रियजय' बतलाया है^{xxxiii}। यजुर्वेद में इन्द्रियजय का साधन इस प्रकार बतलाया गया है, जैसे चतुर सारथी लगाम से घोड़ों को नियन्त्रित करता है और नियम में प्रेरक अत्यन्त वेगवान् मन है। वह मन संकल्प वाला हो, ताकि इन्द्रिय रूपी घोड़ों को मनरूपी लगाम से नियन्त्रित रखा जा सके^{xxxiv}।

6. धारणा^{xxxv}

यह अष्टाङ्ग योग का महत्त्वपूर्ण सोपान है। इसके माध्यम से साधक ईश्वर साक्षात्कार के धरातल से स्वयं को जोड़ने का प्रयत्न करता है। अपने तन, मन, अन्तःकरण से वह ईश्वर तत्त्व को धारण करता है। इसके लिए वेदों में अनेक युक्तियाँ बतलायी गई हैं। यथा— सर्वव्यापक प्रभु की धारणा करना— 'ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्'।^{xxxvi} स्थिरता पर धारणा करना— सभी सांसारिक स्थिरताओं या ठहराओं को ईश्वरीय रूप समझ लेना या समझ कर धारण कर लेना। यजुर्वेद का मन्त्र है— 'तत्रैजति'^{xxxvii}। गति पर धारणा करना— सभी सांसारिक गतियों को ईश्वरीय अभिव्यक्ति मात्र समझना। हर हलचल में अपने प्रियतम प्रभु को देखना। यजुर्वेद का मन्त्र है— 'तदेजति'^{xxxviii}। सुदूर विस्तार पर धारणा करना— व्यक्ति से बाहर जो सुदूर तक फैला विस्तार है उसमें प्रभु की धारणा करना। यजुर्वेद का कथन है— 'तदूरे'^{xxxix}। आन्तरिक प्रवेश द्वारा धारणा करना— यजुर्वेद का कथन है— 'तद्वन्तिके'^{xl}। आत्मवत् साधना— इसके लिए यजुर्वेद का 40.07वाँ मन्त्र द्रष्टव्य है^{xli}।

7. ध्यान^{xlii}

ध्यान की स्थिति मध्यवर्ती है। अपने आरम्भिक स्तर पर यह धारणा की उन्नत अवस्था होती है, किन्तु अन्तिम अवस्था में यह समाधि में परिणित हो जाता है। यजुर्वेद से यह कथन प्रमाणित किया जा सकता है^{xliii}।

8. समाधि^{xliiv}

यह अन्तिम योगाङ्ग है। इसकी सिद्धि हो जाने पर जीवात्मा के जन्म-चक्र का छेदन हो जाता है। वह मुक्तानन्द की अवस्था को प्राप्त कर लेता है। इन मन्त्रों से इस अवस्था की ओर संकेत किया गया है, यथा— यजुर्वेद के अनुसार— हमने ज्योति प्राप्त की और अमर हो गये^{xliiv}। हमने प्रकाश पाया और प्रकाशमान हो गये^{xlii}। इनके अतिरिक्त यजुर्वेद में ही यह प्रतिपादित किया गया है कि— 'विद्ययाऽमृतमश्नुते'^{xlii} अर्थात् विद्या से अमरता प्राप्त होती है। इसी तरह— 'यस्यच्छायाऽमृतम्'^{xliiii} यह भी यजुर्वेद का वचन है, जिसका भाव है कि परमात्मा का आश्रय मुक्ति का हेतु है। संक्षेप में अष्टाङ्ग योग के वैदिक आधार को देखते हुए कहा जा सकता है कि अष्टाङ्गों के स्रोत वेदों में मिलते हैं।

2. क्रियायोग

योगसूत्रकार ने साधनपाद के अन्तर्गत तप, स्वाध्याय और ईश्वरप्रणिधान को संयुक्त रूप में 'क्रियायोग' कहा है^{xlix}। अष्टाङ्गों के प्रसंग में इन तीनों के वैदिक आधार सप्रमाण उल्लिखित कर दिए गए हैं अतः यहाँ पृथक् विचार करने की आवश्यकता नहीं है।

3. षडङ्ग योग

इसे ही हठयोग^{li} के नाम से भी जाना जाता है। शिव संहिता, घेरण्ड संहिता और हठयोग प्रदीपिका आदि ग्रन्थों के अन्तर्गत इस योग का विस्तारपूर्वक वर्णन मिलता है। इसे राजयोग का पूरकयोग भी बतलाया गया है। वेदों में षडङ्ग योग के विषय में विस्तृत वर्णन नहीं है। हाँ यजुर्वेद में षडङ्ग योग शब्द अवश्य मिलता है। इसके अलावा हठयोग परम्परा के अन्तर्गत योग-चक्रों का भी विस्तार से वर्णन मिलता है। वैदिक संहिताओं के बाद जब अरण्यक और उपनिषद् काल आया, तब योग की विधियों को एक ढाँचे में ढाला गया। यह एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक तथ्य है कि 'षडङ्ग योग' (छह अंगों वाला योग) का जन्म मुख्य रूप से 'कृष्ण यजुर्वेद' की शाखाओं से ही हुआ है।

कृष्ण यजुर्वेद से जुड़े निम्नलिखित उपनिषदों में षडङ्ग योग का सबसे स्पष्ट वर्णन मिलता है:

1. मैत्रायणी उपनिषद् (6.18) - कृष्ण यजुर्वेद:

यह षडङ्ग योग का सबसे प्राचीन लिखित प्रमाण माना जाता है। यहाँ योग के 6 अंग इस प्रकार बताए गए हैं: राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा, तर्क और समाधि।

(यहाँ 'आसन' को छोड़कर 'तर्क' को एक अंग माना गया है)।

2. अमृतनाद उपनिषद् (मन्त्र 6) - कृष्ण यजुर्वेद:

यह ग्रंथ भी स्पष्ट रूप से षडङ्ग योग की घोषणा करता है:

प्रत्याहारस्तथा ध्यानं प्राणायामोऽथ धारणा।

तर्कश्चैव समाधिश्च षडङ्गो योग उच्यते॥

(अर्थात: प्रत्याहार, ध्यान, प्राणायाम, धारणा, तर्क और समाधि— इन्हें षडङ्ग योग कहा जाता है)।



3. ध्यानबिन्दु उपनिषद् (मन्त्र 41/42) - कृष्ण यजुर्वेदः

जैसा कि हमने पहले चर्चा की थी, इस उपनिषद् में गोरखनाथ जी वाली शब्दावली ही मिलती है, जिसमें 'तर्क' के स्थान पर 'आसन' को पहला अंग माना गया है:

आसन, प्राणसंरोध, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि— ये योग के छह अंग हैं।
 इस विषय में पतंजलि मौन प्रतीत होते हैं।

4. भगवद्गीता में विस्तृत वर्णित योगों का वैदिक आधारः

❖ ज्ञानयोगⁱⁱⁱ

भगवद्गीता में ज्ञानयोग को 'सांख्ययोग' एवं 'संन्यासयोग' के नाम से भी पुकारा गया है। ज्ञानयोग के अन्तर्गत तत्त्वज्ञान को मानव मुक्ति का आधार बनाया गया है। गीताकार के अनुसार— 'ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिम्'ⁱⁱⁱ अर्थात् ज्ञान को पाकर मनुष्य तत्काल शान्ति को प्राप्त हो जाता है। ज्ञानयोग के अनुसार मनुष्य के भव-बन्धन का मूल कारण है— अज्ञानता। अज्ञानता के वशीभूत पुरुष स्वयं को कर्म का कर्ता मान लेता है। इसी अहम् वृत्ति के कारण वह जन्म-चक्र के बन्धन में फँस जाता है। ज्ञानयोग के अन्तर्गत इस अहम् को पूर्णतः गिराने का आयोजन किया जाता है। इस आयोजन का मूलाधार सांख्य प्रणीत वह तत्त्वज्ञान है, जिसके अनुसार चेतन पुरुष, द्रष्टा या साक्षी स्वरूप वाला है। जबकि जड़ प्रकृति त्रिगुणात्मक है। सभी सांसारिक क्रियायें तीनों गुणों की आपसी क्रीड़ा हैं, परन्तु प्रकृति के सङ्गदोष के कारण पुरुष स्वयं को कर्ता मान लेता है^{iv}। इस तत्त्वचिन्तन का मूलाधार वेदों में दृष्टिगोचर होता है। यथा—

'द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परि षस्वजाते।

तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति'^{iv}॥

अर्थात् प्रकृति रूपी वृक्ष पर जीवात्मा और परमात्मा रूपी दो पक्षी विराजमान हैं। इनमें परमात्मा केवल देखता है— द्रष्टाभाव में स्थित है। इसीलिए प्रकृति के पाश में नहीं फँसता। जबकि जीवात्मा उसके फलों का भोग करता है, इसलिए प्रकृति के बन्धन में पड़ जाता है। अत एव वेद की दृष्टि में प्रकृति से मुक्ति पाने का उपाय है— द्रष्टा या साक्षी भाव में स्थित होना। ज्ञानयोग के इसी तात्त्विक दृष्टि को आधार बनाया गया है।

❖ कर्मयोग^{vi}

कर्मयोग के वैदिक आधार को जानने के लिए यजुर्वेद के दो मन्त्रों पर दृष्टिपात करना आवश्यक है— 'ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्'^{vi}, 'कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः'^{vi}।

प्रथम मन्त्र में ईश्वर को सर्वव्यापक बतलाया गया है। द्वितीय मन्त्र में मनुष्य को संसार में सौ वर्षों तक भी अपने निर्धारित कर्मों को करते रहना चाहिए, अन्यथा जीवन उसके लिए बन्धन रूप हो जाएगा। दर्शन के अन्तर्गत शास्त्रोक्त कर्म ही यज्ञ है। यज्ञ की दो प्रमुख कसौटी हैं— (1) स्वाहा (2) इदन्नमम^{ix}। 'स्वाहा' त्याग का प्रतीक है, जबकि 'इदन्नमम' त्याग जनित फल और अहंकार से मुक्ति पाने की अनुभूत कसौटी है। इस आलोक में देखने पर कर्मयोग का वैदिक आधार विदित हो जाता है।

❖ भक्तियोग^x

भगवद्गीता में वर्णित यह तीसरा योग है। इसे शरणागत 'प्रपत्तियोग' भी कहा जाता है। योगसूत्रकार ने भक्तियोग को 'ईश्वरप्रणिधान' कहा है। जबकि उपनिषदों एवं वेदों में यही 'उपासना' के नाम से जाना जाता है। इस योग के अन्तर्गत सब कुछ अपने आराध्य देव के प्रति समर्पित करना होता है। स्वयं भी भक्त उपासक उसके इंगित पर कठपुतलीवत् नृत्य करता रहता है। इसी में अपने जीवन की सार्थकता समझता है।

इस सन्दर्भ के दृष्टिगत वेदों का अनुशीलन करते हुए हजारों मन्त्र सामने आते हैं, जिनके माध्यम से प्रभु का गुणगान किया जा सकता है। स्वयं को उसकी भक्ति उपासना का पात्र बनाया जा सकता है। जैसा कि यजुर्वेद 13.14, 25.13, 23.03, 32.06— इन वेद मन्त्रों में 'कस्मै देवाय हविषा विधेम' जैसा उच्चतम भक्ति मूलक पद बार-बार आया है। इन मन्त्रों के अतिरिक्त प्रभु-भक्तिमूलक निम्न मन्त्र भी द्रष्टव्य हैं—

(1) त्वमस्माकं तव स्मसि^{xi} अर्थात् हे ईश ! तुम हमारे हो, हम तुम्हारे हैं।

(2) न म इन्द्रेण सख्यं वि योषत्^{xii} अर्थात् प्रभु से मेरी प्रीति न टूटे।

(3) रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूव^{xiii} अर्थात् संसार के सारे रूपों में उस प्रभु का रूप समाया हुआ है।

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोधपरक विवेचन के आलोक में यह अकाट्य तथ्य उद्घाटित होता है कि योगविद्या कोई परवर्ती अथवा विलग वैचारिक संरचना नहीं, अपितु इसका आदि स्रोत वेदों की शाश्वत ज्ञान-धारा में ही संनिहित है। यद्यपि संहिताओं में योग के सिद्धांत किसी संकुचित परिधि या एकबद्ध प्रकरण में आबद्ध नहीं हैं, तथापि समग्र वैदिक वाङ्मय में इसके दार्शनिक सूत्र, आध्यात्मिक संकेत और व्यावहारिक प्रणालियाँ बीज रूप में सर्वत्र संव्याप्त हैं।



अष्टाङ्ग योग के यम-नियमादि नैतिक अधिष्ठान, षडङ्ग योग की अंतर्मुखी साधना, तथा श्रीमद्भगवद्गीता में निरूपित त्रिआयामी समन्वय—ज्ञानयोग का साक्षी-भाव, कर्मयोग की निष्काम यज्ञ-दृष्टि एवं भक्तियोग का आत्यंतिक आत्मसमर्पण—मूलतः वैदिक ऋचाओं के उदात्त चिंतन से ही अनुप्राणित हैं। यह समृद्ध वैचारिक बीजाधार न केवल योगविद्या की प्राचीनता और मौलिकता को सिद्ध करता है, अपितु समकालीन शोध-अध्येताओं को एक सुदृढ़ दार्शनिक निकष और मार्गदर्शक दृष्टि भी प्रदान करता है।

वर्तमान युग में आवश्यकता इस बात की है कि इन वैदिक अंतर्दृष्टियों को आधुनिक शोध-प्रविधियों के अनुरूप व्यवस्थित, परिष्कृत और प्रामाणिक रूप में प्रस्तुत किया जाए। ऐसा अनुशीलन प्राचीन वैदिक प्रज्ञा और आधुनिक वैज्ञानिक चेतना के मध्य एक सुदृढ़ सेतु का निर्माण करेगा, जिससे योगविद्या की सार्वभौमिक प्रासंगिकता वैश्विक पटल पर और अधिक सुस्पष्ट एवं प्रामाणिक रूप से प्रतिष्ठित हो सकेगी।

सन्दर्भ संकेत सूची

i अत्र चत्वारो विषयाः सन्ति, विज्ञान कर्मोपासनाज्ञानकाण्डभेदात्। — श्रीमद्भगवानन्द सरस्वती, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका (1987), पृष्ठ 31.

ii अथर्ववेद - 6.91.1.

iii पातञ्जलयोगसूत्र - 2.29.

iv वही - 2.30.

v वही - 2.31.

vi यजुर्वेद - 3.63.

vii वही - 13.47.

viii वही - 20.12.

ix ऋग्वेद - 10.85.01.

x कृष्ण यजुर्वेद - 10.13

xi पातञ्जलयोगसूत्र - 2.30.

xii शुक्ल यजुर्वेद - 19.11

xiii वही - 4.28.

xiv अथर्ववेद - 11.05.19

xv यजुर्वेद - 40.1.

xvi पातञ्जल योगसूत्र - 2.32.

xvii वही - 2.40.

xviii यजुर्वेद - 19.39.

xix वही - 19.39.

xx पातञ्जल योगसूत्र - 2.42.

xxi यजुर्वेद - 12.69.

xxii पावमानी द्वादश। त्रयोदश संयुक्त अंक पवमानी, पृष्ठ 130-36.

xxiii यजुर्वेद - 40.15.

xxiv वही - 40.11.

xxv पातञ्जल योगसूत्र - 2.45.

xxvi त्रयी वै विद्या नौस्तारिणी तस्याः स्वर्गो लोकः पारम्, शतपथ ब्राह्मण 4.6.7.1.

xxvii स्थिरसुखमासनम् पातञ्जल योगसूत्र 2.46.

xxviii वही 2.48.

xxix वही 2.49.

xxx यजुर्वेद - 39.3. एवं 39.1.

xxxi वही - 36.01

xxxii पातञ्जल योगसूत्र 2.54

xxxiii वही - 2.55

xxxiv ॐ आप्यायन्तु ममाङ्गानि वाक्प्राणश्चक्षुः श्रोत्रमथो बलमिन्द्रियाणि च सर्वाणि।

सर्वं ब्रह्मोपनिषदं माहं ब्रह्म निराकुर्या... सामवेद - 463 व 1290.

xxxv सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव ।

हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ यजुर्वेद - 34.06.

xxxvi पातञ्जल योगसूत्र 3.01.

xxxvii यजुर्वेद - 40.01.

xxxviii तदेजति तत्रैजति तद्दूरे तद्वन्तिके ।



- तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः॥ वही - 40.05.
 xxxix वही - 40.05.
 xl वही - 40.05.
 xli वही - 40.05.
 xlii यस्मिन्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद् विज्ञानतः।
 तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः॥ (ऋग्वेद - 4.4.23 / यजुर्वेद 40.7)
 xliii पातञ्जल योगसूत्र 3.02.
 xliv युञ्जते मन उत युञ्जते धियो विप्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चितः ।
 वि होत्रा दधे वयुनाविदेक इन्मही देवस्य सवितुः परिष्टुतिः ॥ (यजुर्वेद 11.4)
 xlv पातञ्जल योगसूत्र 3.03.
 xlvii सत्रस्यद्विरस्यगन्म ज्योतिरमृता अभूम ।
 दिवं पृथिव्या अध्यारुहामाविन्दाम देवान्स्वर्ज्योतिः ॥ यजुर्वेद - 8.52.
 xlviii उद्वयं तमसस्परि पश्यन्तो ज्योतिरुत्तमम् ।
 देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ॥ यजुर्वेद - 20.21.
 xlix वही - 40.11.
 l वही - 25.13.
 i योगसूत्र - 2.1.
 ii आसनं प्राणसंरोधः प्रत्याहारश्च धारणा ।
 ध्यानं समाधिरेतानि योगाङ्गानि भवन्ति षट् ॥ गोरक्ष शतक, मन्त्र संख्या 04
 iii भगवद्गीता: ज्ञानयोग - द्वितीय एवं पंचम अध्याय.
 iii वही - 4.39
 liv प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः ।
 अहङ्कारविमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते ॥ वही - 3.27.॥
 iv ऋग्वेद - 1.164.20 / श्वेताश्वतरोपनिषद् 4.6
 vi भगवद्गीता: कर्मयोग - तृतीय अध्याय.
 lvii यजुर्वेद - 40.01.
 lviii वही - 40.02.
 lix नित्य कर्मकाण्डपद्धति - महर्षि दयानन्द.
 lx भगवद्गीता भक्तियोग - 12वां अध्याय.
 lxi ऋग्वेद - 08.92.32.
 lxii वही - 02.18.08.
 lxiii वही - 06.47.18.

संदर्भ-ग्रंथ सूची (Bibliography)

1. ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका: लेखक / भाष्यकार: महर्षि दयानन्द सरस्वती, प्रकाशक: आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट / परोपकारिणी सभा, अजमेर, प्रकाशन वर्ष: 1987 (उद्धृत संस्करण)
2. ऋग्वेद संहिता: लेखक / भाष्यकार: अपौरुषेय / वैदिक ऋषि (भाष्य: महर्षि दयानन्द / सायण), प्रकाशक: परोपकारिणी सभा, अजमेर / चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, प्रकाशन वर्ष: 2015
3. शुक्ल यजुर्वेद संहिता (वाजसनेयि): लेखक / भाष्यकार: अपौरुषेय / वैदिक ऋषि, प्रकाशक: रामलाल कपूर ट्रस्ट, बहालगढ़ / चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, प्रकाशन वर्ष: 2012
4. कृष्ण यजुर्वेद (तैत्तिरीय संहिता): लेखक / भाष्यकार: अपौरुषेय / वैदिक ऋषि, प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, प्रकाशन वर्ष: 2010



5. **सामवेद संहिता: लेखक / भाष्यकार:** अपौरुषेय / वैदिक ऋषि, **प्रकाशक:** परोपकारिणी सभा, अजमेर / गीताप्रेस, गोरखपुर, **प्रकाशन वर्ष:** 2018
6. **अथर्ववेद संहिता: लेखक / भाष्यकार:** अपौरुषेय / वैदिक ऋषि, **प्रकाशक:** रामलाल कपूर ट्रस्ट, सोनीपत, **प्रकाशन वर्ष:** 2014
7. **पातञ्जल योगसूत्र (योगदर्शन): लेखक / भाष्यकार:** महर्षि पतञ्जलि (भाष्य: व्यास / दयानन्द), **प्रकाशक:** चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन / गीताप्रेस, गोरखपुर, **प्रकाशन वर्ष:** 2016
8. **शतपथ ब्राह्मणम्: लेखक / भाष्यकार:** महर्षि याज्ञवल्क्य, **प्रकाशक:** चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, **प्रकाशन वर्ष:** 2011
9. **श्वेताश्वतरोपनिषद्: लेखक / भाष्यकार:** उपनिषद् ऋषि (शांकरभाष्य सहित), **प्रकाशक:** गीताप्रेस, गोरखपुर, **प्रकाशन वर्ष:** 2020
10. **श्रीमद्भगवद्गीता: लेखक / भाष्यकार:** महर्षि वेदव्यास, **प्रकाशक:** गीताप्रेस, गोरखपुर, **प्रकाशन वर्ष:** 2021
11. **गोरक्ष शतकम्: लेखक / भाष्यकार:** गुरु गोरक्षनाथ, **प्रकाशक:** चौखम्बा ओरियन्टालिया, वाराणसी, **प्रकाशन वर्ष:** 2008
12. **नित्य कर्मकाण्ड पद्धति (पंचमहायज्ञविधि): लेखक / भाष्यकार:** महर्षि दयानन्द सरस्वती, **प्रकाशक:** आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, दिल्ली, **प्रकाशन वर्ष:** 2013